कलिकाल-सर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्रसूरि

(संकलित)

म. विनयसागर

भारत और जैन शासन के ज्योतिर्धर आचार्यों में और कलिकाल में भी सर्वज्ञ के तुल्य श्री हेमचन्द्रसूरि के नाम से कौन अनभिज्ञ है ? ये आप्तकोटि के मौलिक साहित्यकारोंमें हुए हैं । विविध भाषाओं के जानकार, सम्पूर्ण साहित्य के मर्मज्ञ, विविध विषयों के रचनाकार, १२वीं शताब्दी उद्‌भट विद्वान और गुजरात के संस्कृति-संस्कार-भाषा की अस्मिता/गौरव को स्थायित्व-अमरता प्रदान करनेवाले थे । उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर लिखने के पूर्व उनके सम्बन्ध में विद्वानों ने जो अभिमत प्रकट किए हैं, वह प्रस्तुत कर रहा हूँ :-

सुमस्त्रिसन्ध्यं प्रभुहेमसूरेरनन्यतुल्यामुपदेशशक्तिं ।
अतीन्द्रियज्ञानविवर्जितोऽपि, यः क्षोणिभर्तुर्व्यधित प्रबोधम् ।
सत्त्वानुकम्पा न महीभुजां स्यादित्येष क्लृप्तो वितथः प्रवादः ।
जिनेन्द्रधर्मं प्रतिपद्य येन श्लाघ्यः स केषां न कुमारपालः ?

- सोमप्रभाचार्य-कुमारपालप्रतिबोध

इत्थं श्रीजिनशासनाभ्रतरणेः श्रीहेमचन्द्रप्रभो-
रज्ञानान्धतमःप्रवाहहरणं मात्रादृशां मादृशाम् ॥
विद्यापङ्कजिनीविकासविदितं राज्ञोऽतिवृद्ध्यै स्फुर-
द्वृत्तं विश्वविबोधनाय भवताद् दुःकर्मभेदाय च ॥

- प्रभावकचरित-हेमसूरिप्रबन्ध

''आज गुजरात की प्रजा दुर्व्यसनों से बची हुई है, उसमें संस्कारिता, समन्वय धर्म, विद्यारुचि, सहिष्णुता, उदारमतदर्शिता आदि गुण दृष्टिगत होते हैं, साथ ही भारतवर्ष के इतर प्रदेशों की अपेक्षा गुजरात की प्रजा में धार्मिक झनून आदि दोष अत्यल्प प्रमाण में दृष्टिगत होते हैं तथा समस्त गुजरात की प्रजा को वाणी/बोली प्राप्त हुई है, वह सब भगवान श्री हेमचन्द्र और उनके

जीवन में तन्मयीभूत सर्वदर्शन–समदर्शिता को ही आभारी है ।''

मुनि पुण्यविजय : श्रीहेमचन्द्राचार्य, प्रस्तावना, पृ. १२

''आचार्य हेमचन्द्र के कारण ही गुजरात श्वेताम्बरियों का गढ़–बना तथा वहाँ १२–१३वीं शताब्दी में जैन साहित्य की विपुल समृद्धि हुई । वि.सं.. १२१६ में कुमारपाल पूर्णतया जैन बना ।''

– **विन्टरनित्ज-हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर भाग २ पृ. ४८२–८३, ५११**

श्री कन्हैयालाल मा. मुंशी ने इनकी प्रतिभा को सम्मान देते हुए उचित ही कहा है – ''इस बाल साधु ने सिद्धराज जयसिंह के ज्वलन्त युग के आन्दोलनों को झेला । कुमारपाल के मित्र और प्रेरक पद प्राप्त किया । गुजरात के साहित्य का नवयुग स्थापित किया । इन्होंने जो साहित्यिक प्रणालिकाएँ स्थापित कीं, जो ऐतिहासिक दृष्टि व्यवस्थित/विकसित की, एकता की बुद्धि निर्मित कर जो गुजराती अस्मिता की नींव डाली, उस पर आज अगाध आशा के अधिकारी ऐसा एक और अवियोज्य गुजरात का मन्दिर बना है ।''

(श्री के.एम. मुन्शी प्रसिद्ध इतिहासकार, भारतीय विद्या भवन के संस्थापक, भारत सरकार के उद्योगमन्त्री)

– **धूमकेतु : श्रीहेमचन्द्राचार्य, पृ. १५८ का अनुवाद ।**

''संस्कृत साहित्य और विक्रमादित्य के इतिहास में जो स्थान कालिदास का और श्री हर्ष के दरबार में बाणभट्ट का है, प्रायः वही स्थान ईसा की बारहवीं शताब्दी में चौलुक्य वंशोद्भव सुप्रसिद्ध गुर्जर नरेन्द्र शिरोमणि सिद्धराज जयसिंह के दरबार में हेमचन्द्र का है ।''

– **पं. शिवदत्त : नागरी प्रचारिणी पत्रिका का भाग ६, सं. ४**

''किन्तु, जैसे शिवाजी रामदास के बिना, विक्रम कवि कुलगुरु कालिदास के बिना और भोज धनपाल के बिना शून्य लगते हैं वैसे ही सिद्धराज और कुमारपाल साधु हेमचन्द्राचार्य के बिना शून्य लगते हैं । जिस समय में मालवा के पण्डितो ने भीम के दरबार की सरस्वतीपरीक्षा की, उसी समय से ही यह अनिवार्य था कि गुजरात की पराक्रम लक्ष्मी, संस्कार लक्ष्मी

के बिना जंगली लोगों की बहादुरी जैसे अर्थहीन लगती है । इसे स्वयं का संस्कार-धन सँभालने का रहा ।''

''सिद्धराज जयसिंह को हेमचन्द्राचार्य नहीं मिले होते तो जयसिंह की पराक्रम गाथा आज वाल्मीकि के बिना ही रामकथा जैसी होती और गुजरातियों को स्वयं की महत्ता देखकर प्रसन्न होने का तथा महान होने का आज जो स्वप्न आता है, वह स्वप्न कदाचित् नहीं आता । हेमचन्द्राचार्य के बिना गुजराती भाषा के जन्म की कल्पना नहीं की जा सकती, इनके बिना वर्षों तक गुजरात को जाग्रत रखनेवाली संस्कारिता की कल्पना नहीं की जा सकती और इनके बिना गुजराती प्रजा के आज के विशिष्ट लक्षणों - समन्वय, विवेक, अहिंसा, प्रेम, शुद्ध सदाचार और प्रामाणिक व्यवहार प्रणालिका की कल्पना नहीं की जा सकती । हेमचन्द्राचार्य मानव के रूप में महान थे, साधु के रूप में अधिक महान थे, किन्तु संस्कारद्रष्टा की रीति से ये सबसे अधिक महान थे । इन्होंने जो संस्कार जीवन में प्रवाहित किए, इन्होंने जो भाषा प्रदान की, लोगों को जिस प्रकार बोलना/बोलने की कला प्रदान की, इन्होंने जो साहित्य दिया, वह सब आज भी गुजरात की नसों में प्रवाहित है, इसीलिये ये महान गुजराती के रूप में इतिहास में प्रसिद्धि पाने योग्य पुरुष हैं ।''

''x x x जिसको गुजरात की संस्कारिता में रस हो, उसे इस महान गुजराती से प्रेरणा प्राप्त करनी चाहिये ।''

- धूमकेतु : श्री हेमचन्द्राचार्य, पृ. ७-८ (गुजराती से हिन्दी)

''गुजरात के इतिहास का स्वर्णयुग, सिद्धराज जयसिंह और राजर्षि कुमारपाल का राज्यकाल है । इस युग में गुजरात की राजनैतिक दृष्टि से उन्नति हुई, किन्तु इससे भी बढ़कर उन्नति संस्कार-निर्माण की दृष्टि से हुई। इसमें जैन अमात्य, महामात्य और दण्डनायकों को जो देन है, उसके मूल में महान जैनाचार्य विराजमान हैं । x x x वि.सं. ८०२ में अणहिलपुर पाटण की स्थापना से लेकर इस नगर में उत्तरोत्तर जैनाचार्यों और महामात्यों का सम्बन्ध बढ़ता ही गया था और उसी के फलस्वरूप राजा कुमारपाल के समय में जैनाचार्यों के प्रभाव की पराकाष्ठा का दिग्दर्शन आचार्य हेमचन्द्र में हुआ । x x x वे अपनी साहित्यिक साधना के आधार पर कलिकाल

सर्वज्ञ के रूप में तथा कुमारपाल के समय में जैन शासन के महाप्रभावक पुरुष के रूप में इतिहास में प्रकाशमान हुए ।''

– दलसुख मालवणिया : गणधरवाद की प्रस्तावना, पृ. ४७-४८

हेमचन्द्र के ''काव्यानुशासन''ने उन्हे उच्चकोटि के काव्यशास्त्रकारों की श्रेणी में प्रतिष्ठित किया है । उन्होंने यदि पूर्वाचार्यों से बहुत कुछ लिया, तो परवर्ती विचारकों को चिन्तन के लिएविपुल सामग्री भी प्रदान की ।

– प्रभुदयाल अग्निहोत्री : संचालक-मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी : प्रस्तावना-आचार्य हेमचन्द्र

कलिकालसर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र, जिन्हें पश्चिमी विद्वान आदरपूर्वक ज्ञान का सागर Ocean of Knowledge कहते हैं, संस्कृत जगत् में विशिष्ट स्थान रखते हैं । संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य के मूर्धन्य प्रणेता आचार्य हेमचन्द्र का व्यक्तित्व जितना गौरवपूर्ण है उतना ही प्रेरक भी है । कलिकालसर्वज्ञ उपाधि से उनके विशाल एवं व्यापक व्यक्तित्व के विषय में अनुमान लगाया जा सकता है । न केवल अध्यात्म एवं धर्म के क्षेत्र में अपितु साहित्य एवं भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में भी उनकी प्रतिभा का प्रकाश समान रूप से विस्तीर्ण हुआ । इनमें एक साथ ही वैयाकरण, आलङ्कारिक, धर्मोपदेशक और महान् युगकवि का अन्यतम समन्वय हुआ है । आचार्य हेमचन्द्र का व्यक्तित्व सार्वकालिक,सार्वदेशिक एवं विश्वजनीन रहा है, किन्तु दुर्भाग्यवश अभी तक उनके व्यक्तित्व को सम्प्रदाय-विशेष तक ही सीमित रखा गया । सम्प्रदायरूपी मेघों से आच्छन्न होने के कारण इन आचार्य सूर्य का आलोक सम्प्रदायेतर जनसाधारण तक पहुँच न सका । स्वयं जैन सम्प्रदाय में भी साधारण बौद्धिक स्तर के लोग आचार्य हेमचन्द्र के विषय में अनभिज्ञ हैं । किन्तु आचार्य हेमचन्द्र का कार्य तो सम्प्रदायातीत और सर्वजनहिताय रहा है और, इस दृष्टि से वे अन्य सामान्य जन, आचार्यों एवं कवियों से कहीं बहुत अधिक सम्मान एवं श्रद्धा के अधिकारी हैं ।

संस्कृत साहित्य और विक्रमादित्य के इतिहास में जो स्थान कालिदास का और श्री हर्ष के दरबार में जो स्थान बाणभट्ट का है, प्रायः वही स्थान १२वीं शताब्दी में चौलुक्य वंशोद्भव सुप्रसिद्ध गुर्जर नरेन्द्र शिरोमणि सिद्धराज

जयसिंह के इतिहास में श्री हेमचन्द्राचार्य का है ।

प्रो. पारीख इन्हें Intellectual Giant कहा है । वे सचमुच लक्षण साहित्य तथा तर्क अर्थात् व्याकरण, साहित्य तथा दर्शन के साधारण आचार्य थे । वे सुवर्णाभ कान्ति के तेजस्वी एवं आकर्षक व्यक्तित्व को धारण करने वाले महापुरुष थे । वे तपोनिष्ठ थे, शास्त्रवेत्ता थे तथा कवि थे । व्यसनों को छुड़ाने में वे प्रभावकारी सुधारक भी थे । उन्होंने जयसिंह और कुमारपाल की सहायता से मद्यनिषेध सफल किया था । उनकी स्तुतियाँ उन्हें सन्त सिद्ध करती हैं, तथा आत्म-निवेदन उन्हें योगी सिद्ध करता है । सर्वज्ञ के अनन्य उपासक थे ।

आचार्य हेमचन्द्र के दिव्य जीवन में पद-पद पर हम उनकी विविधता, सर्वदेशीयता, पूर्णता, भविष्यवाणियों में सत्यता और कलिकाल-सर्वज्ञता देख सकते हैं । उन्होंने अपनी ज्ञान-ज्योत्स्ना से अन्धकार का नाश किया। वे महर्षि, महात्मा, पूर्ण संयमी, उत्कृष्ट, जितेन्द्रिय एवं अखण्ड ब्रह्मचारी थे । वे निर्भय, राजनीतिज्ञ, गुरुभक्त, भक्तवत्सल तथा वादिमानमर्दक थे । वे सर्वधर्मसमभावी, सत्य के उपासक, जैन धर्म के प्रचारक तथा देश के उद्धारक थे । वे सरल थे, उदार थे, निःस्पृह थे । सब कुछ होते हुए भी, प्रो. पीटर्सन के शब्दों में, दुनिया के किसी भी पदार्थ पर उनका तिलमात्र मोह नहीं था । उनके प्रत्येक ग्रन्थ में विद्वत्ता की झलक, ज्ञानज्योति का प्रकाश, राजकार्य में औचित्य, अहिंसा प्रचार में दीर्घदृष्टि, योग में आकर्षण, स्तुतियों में गाम्भीर्य, छन्दों में बल, अलङ्कारों में चमत्कार, भविष्यवाणी में यथार्थता एवं उनके सम्पूर्ण जीवन में कलिकालसर्वज्ञता झलकती है ।

हेमचन्द्राचार्य प्रकृति से सन्त थे । सिद्धराज जयसिंह एवं कुमारपाल की राज्यसभा में रहते हुए भी उन्होंने राज्यकवि का सम्मान ग्रहण नहीं किया। वे राज्यसभा में भी रहे तो आचार्य के रूप में ही । गुजरात का जीवन उन्नत करने के लिये उन्होंने अहिंसा और तत्त्वज्ञान का रहस्य जनसाधारण को समझाया, उनसे आचरण कराया और इसीलिये अन्य स्थानों की अपेक्षा गुजरात में आज भी अहिंसा की जड़ें अधिक मजबूत हैं । गुजरात में अहिंसा की प्रबलता का श्रेय आचार्य हेमचन्द्र को ही है । गुजरात ने ही आचार्य

हेमचन्द्र को जन्म दिया । यह दैवी घटनाओं का चमत्कार प्रतीत होता है, किन्तु वास्तव में आचार्य हमेचन्द्र ने अपने दिव्य आचरण से, प्रभावकारी प्रचार एवं उपदेश से महात्मा गांधी के जन्म की पृष्ठभूमि ही मानों तैयार की थी । भारत के इतिहास में यदि सर्वथा मद्यविरोध तथा मद्यनिषेध हुआ है तो वह सिद्धराज एवं कुमारपाल के समय में ही । इसका श्रेय निःसन्देह पूर्णतया आचार्य हेमचन्द्र को ही है । उस समय गुजरात की शान्ति, तुष्टि, पुष्टि एवं समृद्धि के लिये आचार्य हेमचन्द्र ही प्रभावशाली कारण थे । इनके कारण ही कुमारपाल ने अपने आधीन अठारह बड़े देशों में चौदह वर्ष तक जीवहत्या का निवारण किया था । कर्णाटक, गुर्जर, लाट, सौराष्ट्र, कच्छ, सिन्धु, उच्च भंमेरी, मरुदेश, मालव, कोंकण, कीर, जांगलक, सपादलक्ष, मेवाड़, दिल्ली और जालन्धर देशों में कुमारपाल ने प्राणियों को अभयदान दिया और सातों व्यसनों का निषेध किया ।

आचार्य हेमचन्द्र ने अपने पाण्डित्य की प्रखर किरणों से साहित्य, संस्कृति और इतिहास के विभिन्न क्षेत्रों को आलोकित किया है । वे केवल पुरातन पद्धति के अनुयायी नहीं थे । जैन साहित्य के इतिहास में हेमचन्द्र युग के नाम से पृथक् समय अङ्कित किया गया है तथा उस युग का विशेष महत्त्व है । वे गुजराती साहित्य और संस्कृति के आद्य-प्रयोजक थे । इसलिये गुजरात के साहित्यिक विद्वान् उन्हें गुजरात का ज्योतिर्धर कहते हैं । उनका सम्पूर्ण जीवन तत्कालीन गुजरात के इतिहास के साथ गुँथा हुआ है । उन्होंने अपने ओजस्वी और सर्वाङ्गपरिपूर्ण व्यक्तित्व से गुजरात को सँवारा है, सजाया है और युग-युग तक जीवित रहने की शक्ति भरी है ।

'हेम सारस्वत सत्र' उन्होंने सर्वजनहिताय प्रकट किया । कन्हैयालाल माणकलाल मुन्शी ने उन्हें गुजरात का चेतनदाता (Creator of Gujarat Consciousness) कहा है ।[१]

डॉ. वि.भा.मुसलगांवकर : आचार्य हेमचन्द्र, पृ. १६९-१७३

कृतिकार हेमचन्द्र

---

१. आचार्य हेमचन्द्र : पृ. १७२-१७३

इनके जीवनवृत्त के सम्बन्ध में स्वरचित ग्रन्थों एवं परवर्ती आचार्यों/ लेखकों द्वारा लिखित निम्नाङ्कित ग्रन्थों में प्रचुर एवं प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध हैं :

१.	शतार्थकाव्य	श्रीसोमप्रभसूरि	
२.	कुमारपाल प्रतिबोध	सोमप्रभसूरि	१२४१
३.	मोहराज पराजय	मन्त्री यशपाल	१२२८-१३३२
४.	पुरातन प्रबन्ध सङ्ग्रह	अज्ञात	-
५.	प्रभावक चरित	प्रभाचन्द्रसूरि	१३३४
६.	प्रबन्ध चिन्तामणि	मेरुतुङ्गसूरि	१३६१
७.	प्रबन्धकोश	राजशेखरसूरि	१४०५
८.	कुमारपाल प्रबन्ध	उपाध्याय जिनमण्डन	१३९२
९.	कुमारपाल प्रबोध प्रबन्ध	जयसिंहसूरि	१४२२
१०.	कुमारपाल चरितम्	जयसिंहसूरि	१४२२
११.	विविधतीर्थकल्प	जिनप्रभसूरि	१३८९
१२.	रासमाला	अलेक्जण्डर किन्लॉक फार्ब्स	१८७८
१३.	लाईफ ऑफ हेमचन्द्र (हेमचन्द्राचार्य जीवन चरित्र कस्तूरमल बांठिया)		
१४.	हेम समीक्षा	मधुसूदन मोदी	
१५.	श्री हेमचन्द्राचार्य	धूमकेतु	१९४६
१६.	आचार्य हेमचन्द्र	डॉ. वि.भा.मुसलगांवकर	१९७१

स्वकृत ग्रन्थ

१.	द्व्याश्रय काव्य	हेमचन्द्रसूरि	
२.	सिद्धहेमशब्दानुशासन प्रशस्ति	हेमचन्द्रसूरि	
३.	परिशिष्ट पर्व	हेमचन्द्रसूरि	११७२
४.	त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित	हेमचन्द्रसूरि	-

आधुनिक काल में उपर्युक्त सामग्री के आधार पर सबसे पहले जर्मन विद्वान् डॉ० बुल्हर ने ईस्वी सन् १८८९ में वेना में रहते हुए हेमचन्द्रसूरि का जीवन चरित्र लिखा है । यह पुस्तक जर्मन भाषा में प्रकाशित हुई थी । इसी का अंग्रेजी अनुवाद प्रो. डॉ० मणिलाल पटेलने ई.सन. १९३६ में किया था जिसे सिंघी जैन ज्ञानपीठ विश्व भारती शान्तिनिकेतन से प्रकाशित किया गया था । इसी के आधार पर आचार्यश्री का जीवन वृत्तान्त लिखा जा रहा है।

जीवनचरित्र

हेमचन्द्र का जन्म अहमदाबाद से ६० मील दूर धंधुका में विक्रम संवत् ११४५ कार्तिक पूर्णिमा को हुआ था । धंधुका में इनके माता-पिता मोढ़ वंशीय वैश्य रहते थे । पिता का नाम चाचिग और माता का नाम पाहिणीदेवी था । पिता का नाम, चाच्च, चाच, चाचिग तीनों मिलते है । मोढ़ वंशीय वैश्यों की कुलदेवी चामुण्डा और कुलयक्ष गोनस था । माता पाहिणी जैन थी और पिता चाचिग सनातनधर्मी थे । नामकरण के समय नाम रखा गया चांगदेव। इनके मामा नेमिनाग जैन धर्मी थे । आगामी प्रसङ्गों में उदयनमन्त्री द्वारा रूपये दिये जाने पर उन्होंने शिवनिर्माल्य शब्द का प्रयोग किया है अतः इसके पिता शैव थे, ऐसा लगता है । पिता शैव और माता जैन इसमें कोई विरोध नहीं है । स्वयं गुजरात के महाराजाधिराज सिद्धराज जयसिंह की माता जैन थी और उनके पिता शैव धर्मावलम्बी थे ।

प्रबन्ध कोष के अनुसार चांगदेव जब गर्भ में तब माता पाहिणी ने स्वप्न में आम्र का सुन्दर वृक्ष देखा था । इस पर आचार्य देवचन्द्र ने स्वप्नलक्षण फल का कथन करते हुए कहा था कि 'वह दीक्षा लेने योग्य होगा ।' कुमारपाल प्रतिबोध के अनुसार उसकी माता ने चिन्तामणि रत्न का स्वप्न देखा था । उसका फल कथनकरते हुए आचार्य देवचन्द्र ने कहा था कि तुम्हारे एक चिन्तामणि तुल्य पुत्र होगा, परन्तु गुरु को सौंप देने के कारण सूरिराज होगा, गृहस्थ नहीं ।

दीक्षा :

कुमारपाल प्रतिबोध के अनुसार चांगदेव अपनी माता पाहिणी के साथ पूर्णतल्लगच्छीय देवचन्द्रसूरि के उपदेश सुनने के लिए पौषधशाला जाते

थे । उपदेशों से प्रभावित होकर चांगदेव ने आचार्य से दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा प्रकट की । उस समय नेमिनाग ने गुरु से चांगदेव का परिचय भी करवाया । चांगदेव की बात सुनकर आचार्य ने उसकी माता से दीक्षा की अनुमति चाही । किन्तु, उसने कहा कि इसके पिता अभी बाहर गए हैं, उनके आने पर अनुमति प्रदान की जाएगी । नेमिनाग के समझाने-बुझाने पर उसने अपने पुत्र को आचार्यश्री को सौंप दिया और आचार्य ने उसे खम्भात में मन्त्री उदयन के पास रखा । आचार्य ने जैन संघकी अनुमति से समय पर चांगदेव को दीक्षा दी और उसका नाम सोमचन्द्र रखा । सोमचन्द्र का शरीर सुवर्ण के समान तेजस्वी एवं चन्द्रमा के समान सुन्दर था, इसीलिए वे हेमचन्द्र कहलाए।

प्रबन्ध चिन्तामणि के अनुसार बाल्यावस्था का एक प्रसङ्ग और मिलता है - ''चांगदेव अपने समवयस्क बालकों से खेलते हुए उपाश्रय पहुँचे और बाल्य स्वभाव से देवचन्द्राचार्य के पाट पर तत्काल जा बैठे । आचार्य ने देखा और कहा कि यदि इसने दीक्षा ग्रहण कर ली तो युगप्रधान के समान होगा । आचार्य ने उसकी माता से उसको मांगा और माता ने 'पिता बहार गए हैं' कहकर टाल दिया । भाई नागदेव के कहने से बहिन पाहिणी ने आचार्य को सुपुर्द कर दिया और वह खम्भात में उदयन मन्त्री के पास चला गया ।

चाचिग घर आया और चांगदेव को न देखकर पूछा कि चांगदेव कहां है ? माता चुप रही, फिर उसे ज्ञात हुआ कि चांगदेव खम्भात में मन्त्री उदयन के पास है । चाचिग अपने पुत्रको लेने के लिए खम्भात, उदयन के घर पहुँचा और स्नेहविह्वल होकर पुत्र की याचना की । मन्त्री उदयन ने तीन दुशालें और तीन लाख रूपये प्रदान कर उसकी दीक्षा की अनुमति चाही। चाचिग ने पुत्रप्रेम में पागल होकर यह कहा कि यह द्रव्य शिवनिर्माल्य है, आप मुझे मेरा पुत्र दीजिए । अन्त में मन्त्री उदयन के हर तरह से बहुत समझाने-बुझाने पर दीक्षा की अनुमति प्रदान की ।

समय पर उदयन मन्त्री के सहयोग से चतुर्विध संघ के समक्ष देवचन्द्राचार्य ने उसको दीक्षा दी और दीक्षा नाम रखा सोमचन्द्र । प्रभावक चरित्र के अनुसार इनका दीक्षा संस्कार विक्रम संवत् ११५० माघ शुक्ला

चतुर्दशी शनिवार को हुआ था । जिनमण्डनगणि कृत कुमारपाल प्रबन्ध के अनुसार इनका दीक्षा संवत् ११५४ लिखा है। जो कि काल गणना के अनुसार युक्त संगत प्रतीत होता है । प्रबन्ध चिन्तामणि, प्रबन्ध कोष, पुरातन प्रबन्ध सङ्ग्रह आदि ग्रन्थकार भी दीक्षा समय ८ वर्ष ही बतातें हैं । अतः ११५४ ही उपयुक्त प्रतीत होता है। प्रो. पारीख (काव्यानुशासन प्रस्तावना, पृष्ठ २६७-६८, महावीर विद्यालय, बम्बई)ने बुल्हर के मत का खण्डन करते हुए दीक्षा संवत् ११५४ ही स्वीकार किया है । उनका कथन है कि आचार्य देवचन्द्र की दृष्टि चांगदेव परव विक्रम संवत् १९५० में ही पड़ी होगी । प्रबन्ध चिन्तामणि के अनुसार इनकी दीक्षा खम्भात में न होकर कर्णावती । (आज का अहमदाबाद) में हुई थी और दीक्षा महोत्सव में चाचिग भी सम्मिलित था । नामकरण संस्करण के समय इनका नाम सोमचन्द्र रखा गया ।

दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् सोमचन्द्र विद्याध्ययन में संलग्न हुए । उन्होंने प्रभावक चरित्र (हेमचन्द्रसूरि प्रबन्ध, श्लोक ३७) के अनुसार तर्क, लक्षण एवं साहित्य विद्या पर थोड़े से समय में ही अधिकार प्राप्त कर लिया। तर्क, लक्षण और साहित्य उस युग की महान् विद्याएँ मानी जाती थी और इस महत्रयी का पाण्डित्य राज दरबार और जन समाज में अग्रगण्य होने के लिए अत्यावश्यक था । सोमचन्द्र की शिक्षा का प्रबन्ध स्तम्भतीर्थ में उदयन मन्त्री के निवास स्थान पर ही हुआ था। प्रो. पारीख (काव्यानुशान की अंग्रेजी प्रस्तावना) के मतानुसार हेमचन्द्र ने गुरु देवचन्द्रसूरि के साथ देश-देशान्तर परिभ्रमण करते हुए शास्त्रीय एवं व्यावहारिक ज्ञान की अभिवृद्धि की थी । डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री के मतानुसार (आचार्य हेमचन्द्र और उनका शब्दानुशासन-एक अध्ययन, पृष्ठ १३, - नेमिचन्द्र शास्त्री) हेमचन्द्र नागोर में धनद नामक सेठ के यहाँ तथा देवचन्द्रसूरि और मलयगिरि के साथ गौड़ देश के खिल्लर ग्राम गए थे तथा स्वयं काश्मीर गए थे । संवत् ११६६ में नागपुर के धनद नामक व्यापारी ने ही सूरिपद प्रदान महोत्सव किया था । इस प्रकार २१ वर्ष की अवस्था में हेमचन्द्र आचार्य बन गए थे ।

गुरु का नाम

डॉ० बुल्हर के मतानुसार हेमचन्द्र ने अपने किसी भी ग्रन्थ में अपने

गुरु के नाम का उल्लेख नहीं किया है, जो कि यथार्थ प्रतीत नहीं होता है। त्रिषष्टिशलाकापुरुष चरित के १०वें पर्व की प्रशस्ति में हेमचन्द्र ने अपने गुरु का स्पष्ट नामोल्लेख किया है । प्रभावक चरित्र एवं कुमारपाल प्रबन्ध के अनुसार हेमचन्द्र के गुरु देवचन्द्रसूरि ही थे । विन्टरनित्ज महोदय ने मलधारी अभयदेवसूरि के शिष्य हेमचन्द्र का उल्लेख किया है । (ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर विन्टरनित्ज, वाल्यूम टू, पृष्ठ ४८२-४८३) । डॉ० सतीश चन्द्र (दी हिस्ट्री आफ इण्डियन लाजिक, पृष्ठ १०५)ने आचार्य हेमचन्द्र को प्रद्युम्नसूरि का गुरुबन्धु लिखा है । उत्पादादि सिद्धि प्रकरण टीका में चन्द्रसेन ने हेमचन्द्र के गुरु का नाम देवचन्द्रसूरि ही लिखा है । अतः यह स्पष्ट है कि हेमचन्द्र के गुरु का नाम देवचन्द्रसूरि ही था । देवचन्द्र ही इनके दीक्षा गुरु, शिक्षा गुरु एवं विद्या गुरु थे । यह सम्भव है कि उन्होंने अन्य विद्याओं का अध्ययन अन्यत्र भी किया हो । प्रबन्ध चिन्तामणि के अनुसार हेमचन्द्र ने अपने गुरु से स्वर्णसिद्धि का रहस्य पूछा था, गुरु ने नहीं बताया था ।

सरस्वती की आराधना

प्रभावक चरित्र के अनुसार ब्राह्मीदेवी जो कि विद्या की अधीष्ठात्री देवी है की आराधना के लिए काश्मीर जाने का विचार किया था । मार्ग में ताम्रलिप्ति (खम्भात) होते हुए जब रैवन्तगिरि पर पहुँचे तो हेमचन्द्र को यह स्थान पसन्द आया और उन्होंने प्रबन्ध चिन्तामणि के अनुसार वहीं आराधना करने का मानस बनाया । हेमचन्द्र वहीं उपासना करने लगे और माता सरस्वती उनके सन्मुख प्रकट होकर कहने लगी - हे पुत्र ! तुम्हारी समस्त मनोकामनाएँ, पूर्ण होंगी । समस्त वादीगणों को पराजित करने की क्षमता तुम्हें प्राप्त होगी । यह सरस्वती देवी का वरदान सुनकर वे प्रसन्न हुए और काश्मीर यात्रा पर नहीं गए । इस प्रकार शारदा की कृपा से वे सिद्धसारस्वत बन गए और उनमें 'शतसहस्रपद' धारण करने की शक्ति प्रकट हुई ।

सिद्धराज जयसिंह से सम्बन्ध

महाराजा सिद्धराज जयसिंह इतिहास प्रसिद्ध और समग्र दृष्टियों से राजनीति का धुरन्धर माना जाता था । आचार्य हेमचन्द्र का सम्बन्ध सिद्धराज

जयसिंह से कब हुआ ? प्रभावक चरित्र और प्रबन्ध चिन्तामणि के अनुसार संवत् ११८१ में दिगम्बर कुमुदचन्द्र के साथ वादी देवसूरि का जो शास्त्रार्थ हुआ था उस समय हेमचन्द्र भी देवसूरि के साथ थे । प्रबन्ध चिन्तामणि के अंग्रेजी अनुवादक प्रो. टोनी के अनुसार सर्वप्रथम अपनी बहुमुखी विद्वत्ता से ही राजा को प्रभावित किया होगा और बाद में धार्मिक प्रभाव आया होगा। प्रभावक चरित्र (२२/६७) के अनुसार सिद्धराज जयसिंह और आचार्य हेमचन्द्र का मिलन अणहिलपुर के एक सकड़े मार्ग पर हुआ था । जहाँ से हाथी को निकलने में रुकावट पड़ी थी और हेमचन्द्र ने 'सिद्ध को निश्शङ्क होकर अपने गजराज को ले जाने के लिये कहा और श्लेष से स्तुति की ।' हेमचन्द्र की प्रशान्त मुद्रा और उद्भट पाण्डित्य से प्रभावित होकर अभिवादन के पश्चात् उन्होंने कहा होगा कि 'प्रभो ! आप राजप्रासाद में पधारकर दर्शन देने की कृपा करें ।' इसके पश्चात् ही हेमचन्द्र ने यथा समय राज्यसभा में प्रवेश किया और अपनी अद्भुत वैदुष्य और चारित्रबल से राजा को प्रसन्न किया।

कुमुदचन्द्र के साथ शास्त्रार्थ का समय ११८१ के अनुसार हेमचन्द्र का सम्पर्क सिद्धराज जयसिंह से उसी समय हुआ था । किन्तु, प्रबन्ध चिन्तामणि, प्रभावक चरित्र के अनुसार इनका सम्पर्क इस शास्त्रार्थ से पूर्व ही हो चुका था । प्रो. **पारीख** के मतानुसार संवत् ११६९ के लगभग यह सम्पर्क हुआ होगा ।

अरबी भूगोलज्ञ **अरी इदसी** ने लिखा है कि जयसिंह बुद्ध प्रतिमा[१] की पूजा करता था । यह उल्लेख डॉ० **बुल्हर** ने भी किया है । हेमचन्द्र की अमृतमय वाणी में उपदेश न मिलने पर जयसिंह के चित्त में एक क्षण भी संतोष नहीं होता था । आचार्य हेमचन्द्र तथा सिद्धराज जयसिंह लगभग समवयस्क थे । सिद्धराज का जन्म केवल तीन वर्ष पूर्व ही हुआ था । अतः इन दोनों का परस्पर सम्बन्ध गुरु शिष्य के समान कभी नहीं रहा । फिर भी सिद्धराज सदैव हेमचन्द्र के प्रभाव में रहे ।

सिद्धराज जयसिंह और आचार्य हेमचन्द्र के सम्बन्धों को देखकर सोमप्रभसूरि कुमारपाल प्रबन्ध में लिखते हैं 'बुधजनों के चूड़ामणि आचार्य हेमचन्द्र भुवनप्रसिद्ध सिद्धराज को सर्व स्थानों में प्रष्टव्य हुए ।' शैव होने पर

भी सिद्धराज जयसिंह जिनेन्द्र धर्म के प्रति अनुरक्त हुआ । हेमचन्द्र के प्रभाव में आकर ही जयसिंह ने रम्य **राजविहार** बनवाया । हेमचन्द्र रचित संस्कृत द्व्याश्रय महाराज के अनुसार सिद्धपुर में महावीर स्वामी का मन्दिर बनवाया। सिद्धपुर में ही चार जिनप्रतिमाओं से समृद्ध **सिद्धविहार** भी बनवाया ।

हेम-गोपालक

कहा गया है कि आचार्य हेमचन्द्र जिस समय सिद्धराज जयसिंह की राजसभा में पहुँचे, उसी समय ईर्ष्यावश किसी मसखरे विद्वान् ने **व्यङ्ग्य** कसते हुए कहा - "**आगतो हेमगोपालो दण्डकम्बलधारकः**" अर्थात् दण्ड-कम्बल धारक हेमगोवालिया आ गया है (जैन साधु बांए कन्धे पर कम्बल और दांए हाथ में दण्ड धारण करते हैं) यह सुनकर हेमचन्द्र ने तत्काल ही सहज भाव से उस विद्वान् का मुख बन्द करने के लिए करारी चोट करते हुए उत्तर दिया- "**षडदर्शनपशुग्रामांश्चारयन् जैनवाटके**" अर्थात् षड्दर्शनरूप पशुगणको जैन वाड़े में चराता हुआ दण्ड कम्बल धारक हेमचन्द्र आया है। अर्थात् आक्षेपकारक विद्वानों का सदा के लिए मुँह बन्द हो गया ।

सिद्धहेम शब्दानुशासन की रचना

मालव देश और उसका अधिपति महाराजा भोज, सिद्धराज जयसिंह की आंखों में सर्वदा खटकता रहता था और उसके लिए रात-दिन प्रयत्न रहता था कि मेरी मालव पर विजय हो । विक्रम संवत् ११९१ में सिद्धराज जयसिंह ने मालव पर विजय प्राप्त की । मालव को लूटकर वहाँ के ऐश्वर्य और साहित्यिक समृद्धि को लेकर पाटण आया और उस समृद्धि को देखते हुए जब 'भोज व्याकरण' देखा तो वह मालव के प्रति नत-मस्तक होकर रह गया । साहित्यिक दृष्टि से मालव इतना समृद्ध था, आज गुजरात भी नहीं है । आज गुजरात के पास साहित्यिक दृष्टि से अपना कहने को कुछ नहीं है । राज्यविस्तार, आर्थिक और सामाजिक के दृष्टि से गुजरात भले कितना ही बड़ा हो किन्तु, मालव की साहित्य समृद्धि के सामने गुजरात की साहित्य

---

१. बूत यानी प्रतिमा । बुद्ध प्रतिमा ही ज्यादातर देखी होने के कारण एरेबिक लोग इस प्रतिमा को बूत-बुध करके पहचानते थे । वास्तव में यह प्रतिमा शिवकी या जिनकी होनी चाहिए।

समृद्धि शून्य है । महाराजा भोज रचित भोज व्याकरण के समान गुजरात का भी कोई व्याकरण होना चाहिए ।

सिद्धराज जयसिंह की राजसभा में बड़े धुरन्धर दिग्गज विद्वान् थे । जैसे सिंह नामक सांख्यवादी, वीराचार्य, वादी देवसूरि, कुमुदचन्द्र, शारदादेश के उत्साह पण्डित, सागर पण्डित, राम, प्रज्ञाचक्षु महाकवि श्रीपाल, महामति भागवत, देवबोध, भाव बृहस्पति, अभयदेवसूरि, मलधारी हेमचन्द्र, वर्द्धमानसूरि आदि । उन्होंने इस व्याकरण की रचना करने में कौन विद्वान् सक्षम है ? इस दृष्टि से अपनी विद्वत्परिषद् को देखा तो केवल अपूर्व प्रतिभा सम्पन्न हेमचन्द्र ही नजर आए कि यही मेरी कामना को पूर्ण कर सकते हैं । उन्होंने राजसभा में हेमचन्द्र से अनुरोध किया 'हे प्रभो ! आप गुजरात के लिए भी व्याकरण की नवीन रचना कीजिए ।'

सिद्धराज जयसिंह की यह अभिलाषा अनुरोध स्वीकार करते हुए हेमचन्द्र ने कहा कि एतत् सम्बन्धी जो साहित्य और जो विद्वान् अपेक्षित हों, उनकी आप व्यवस्था करावें । जयसिंह ने स्वीकार किया । काश्मीर आदि से समस्त प्रकार के व्याकरण और उनके विद्वानों को बुलाकर हेमचन्द्र के सहयोगी के रूप में रखा । हेमचन्द्र ने भी अपनी प्रकर्ष प्रतिभा का उपयोग करते हुए भगवान महावीर की देशना का अमूल्य सूत्र स्याद्वाद समक्ष रखते हुए व्याकरण की रचना प्रारम्भ की । पहला ही सूत्र 'सिद्धिः स्याद्वादाद्' अर्थात् स्याद्वाद और समन्वयवाद का शङ्खनाद कर दिया । इस व्याकरण में राजा और अपना नाम जोड़ते हुए व्याकरण का नाम रखा 'सिद्धहेमशब्दानुशासन' । सिद्ध अर्थात् सिद्धराज जयसिंह, हेम अर्थात् हेमचन्द्र और शब्दानुशासन अर्थात् व्याकरण । इस व्याकरण का परिचय आगे दिया जाएगा । समस्त विद्वानों द्वारा एक मत से इस व्याकरण के सम्बन्ध में प्रशंसात्मक अभिमत सुनकर सिद्धराज जयसिंह प्रसन्न हुए और कहा जाता है कि जल के प्रवाह में अधिष्ठात्री देवी ने इस व्याकरण को सहज स्वीकार किया इसीलिए यह गुजरात का प्रसिद्ध व्याकरण बन गया ।

महाराजा कुमारपाल

सिद्धराज जयसिंह अपुत्रीय थे इसीलिए किसी विद्वान् ज्योतिषी से

ज्ञात कर कि मेरे पीछे राज्यधुरा का संचालन कुमारपाल करेंगे । वे यह नहीं चाहते थे कि कुमारपाल राज्य का अधिपति बने । अतएव कुमारपाल के मरण का अनेक बार प्रयोग किया गया । कुमारपाल भी मरणभय से इधर-उधर भागते रहे । एक समय कुमारपाल हेमचन्द्र के सम्पर्क में आए, उनके लक्षण देखकर हेमचन्द्र ने यह निश्चय किया और कुमारपाल से कहा कि 'तुम इस प्रदेश के राजा बनोगे उस समय मुझे याद करना ।' सिद्धराज जयसिंह के भेजे हुए राज्यपुरुष कुमारपाल को ढूँढ़ते हुए खम्भात आ पहुँचे । उस समय हेमचन्द्र ने अपनी वसती के भूमिगृह में कुमारपाल को छिपा दिया और उसके द्वार को पुस्तकों से ढक कर उसके प्राण बचाए । कहा जाता है कि जब राजपुरुष हेमचन्द्र के पास पहुँचे और पूछा तो जवाब दिया कि तलघर में ढूंढ लो, राजपुरुषों ने सोचा कि वहाँ पुस्तकें ही पुस्तकें है इसीलिए वे लोग वापिस चले गए। मन्त्री उदयन और आचार्य हेमचन्द्र उसके संरक्षण का अनेक बार प्रयोग करते रहे । जयसिंह की मृत्यु के पश्चात् राजगद्दी का बखेड़ा भी प्रारम्भ हुआ किन्तु अन्त में संवत् ११९९ मार्ग शीर्ष कृष्णा चतुर्दशी को कुमारपाल का राज्याभिषेक हो गया । राज्य की उथल-पुथल और षड्यन्त्रकारियों से गुजरात को मुक्त करने में कुमारपाल ने सबल प्रयत्न किया और पूर्णतः से इसको मुक्त करवा दिया । राज्यव्यवस्था में अत्यन्त संलग्न होने के कारण हेमचन्द्र को भूल भी गए था ।

कुमारपाल प्रबन्ध, प्रबन्ध चिन्तामणि, पुरातन प्रबन्ध संग्रह कुमारपाल प्रबन्ध के अनुसार जिस समय कुमारपाल का राज्याभिषेक हुआ उस समय उसकी अवस्था ५० वर्ष ही होगी । इसका लाभ यह हुआ कि उसने अपने अनुभव और पुरुषार्थ द्वारा राज्य की सुदृढ़ व्यवस्था की । यद्यपि कुमारपाल सिद्धराज के समान विद्वान् नहीं था, तब भी राज्यप्रबन्ध के करने के पश्चात् धर्म तथा विद्या से प्रेम करने लगा था । कुमारपाल की राज्यप्राप्ति के संवाद सुनकर हेमचन्द्र कर्णावती से पाटण गए, तब मन्त्री उदयन से ज्ञात हुआ कि वह उन्हें बिल्कुल भूल चुका है । हेमचन्द्र ने उदयन से कहा कि 'आज आप राजा से कहें कि वह अपनी नई रानी के महल में न जावें । आज वहाँ उत्पात होगा ।' यह किसने कहा यह जानने की जिज्ञासा हो तो अत्यन्त

अनुरोध करने पर मेरा नाम बताना । उदयन ने वैसा ही किया । रात्रि को महल पर बिजली गिरी और रानी की मृत्यु हो गई। राजा ने यह विस्मयकारक चमत्कार देखकर आचार्य हेमचन्द्र को गुरु के रूप में स्मरण किया और राज्यसभा में बुलाए । राजा ने उनका सन्मान किया और प्रार्थना की कि 'उस समय आपने मेरे प्राणों की रक्षा की थी और यहाँ आने पर हमें दर्शन भी नहीं दिए, लीजिए अब अपना राज्य संभालिये ।' आचार्य ने उत्तर दिया– 'राजन् ! यदि आप कृतज्ञता के कारण प्रत्युपकार करना चाहते हैं तो भगवान महावीर की वाणी अनेकान्तवाद और अहिंसा का प्रचार–प्रसार करें ।' राजा ने शनैःशनैः उक्त आदेश के स्वीकार करने की प्रतिज्ञा की और अपने राज्य से कुमारपाल ने प्राणीवध, मांसाहार, असत्य भाषण, द्यूतव्यसन, वेश्यागमन, परधनहरण, मद्यपान आदि दुर्व्यसनों का जड़मूल से निषेध कर दिया । अमारिघोषणा करवाई । उसने अपने अधीन १८ प्रान्तों में पशुवध का निषेध कर दिया था । अहिंसा का इतना व्यापक प्रचार किया कि कुमारपाल का जीवन अहिंसामय हो गया। कुमारपाल प्रतिबोध के अनुसार कुमारपाल के आचार–विचार और व्यवहार देखने से तथा हेमचन्द्र के अनन्योपासक होने से कुमारपाल ने जीवन के अन्तिम दिनों में जैन धर्म स्वीकार कर लिया होगा और प्रायः उनका जीवन द्वादशव्रतधारी श्रावक जैसा हो गया होगा । इसीलिए कुमारपाल को हेमचन्द्र स्वयं अपने ग्रन्थों में 'परमार्हत' करते हैं । यह सत्य है कि वह जैन विचारों का पालन करते हुए तन्मय हो गया था और हेमचन्द्र को गुरु मानकर वह उन्हीं के आदेशों का अनुसरण करता था । प्रभास पाटण के भावबृहस्पति विक्रम संवत् १२२९ में भद्रकालि शिलालेख में माहेश्वर नृपाग्रणी कहते हैं और हेमचन्द्र भी संस्कृत द्व्याश्रय काव्य के २०वें सर्ग में कुमारपाल की शिवभक्ति का उल्लेख करते हैं ।

कहते हैं कि हेमचन्द्र और कुमारपाल का गुरु–शिष्य जैसा सम्बन्ध था और हेमचन्द्राचार्य के प्रभाव में आकर कुमारपाल ने जैन परम्परा की अत्यधिक उन्नति की थी । अनेक जिनमन्दिर बनवाए । १४०० विहार बनवाए और जैन धर्म को राज्यधर्म बनाया । इसका उल्लेख रामचन्द्रसूरि कृत

कुमारविहारशतक में मिलता है । जहाँ कुमारपाल ने सहस्रों मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया वहीं केदार तथा सोमनाथ के मन्दिर का भी जीर्णोद्धार करवाया ।

कुमारपाल की प्रार्थना पर ही आचार्य हेमचन्द्र ने त्रिषष्टिशलाकापुरुष-चरित महाकाव्य, योगशास्त्र तथा वीतराग स्तुति आदि की रचना की । संस्कृत द्व्याश्रय काव्य का अन्तिम सर्ग और प्राकृत द्व्याश्रय काव्य कुमारपाल के समय में ही लिखा गया । प्रमाण मीमांसा की रचना भी इसी के काल में हुई । अनेक ग्रन्थों की स्वोपज्ञ टीकाएं, जिसमें कि कुमारपाल का उल्लेख मिलता है, रचना की गई । कुमारपाल ने ७०० लेखकों को बुलवाकर हेमचन्द्र निर्मित ग्रन्थ की प्रतिलिपि करवाई और २१ ज्ञानभण्डार भी स्थापित किए।

परमार्हत् कुमारपाल रचित साधारण जिनस्तवः 'नम्राखिलाखण्डल-मौलिरत्न' ३३ पद्यों का यह स्तव भी प्राप्त होता है । ऐसा लगता है कि जैन शासन में वासितचित्त होकर कुमारपाल ने अन्तिम समय में वीतराग स्तोत्र, योगशास्त्र आदि ग्रन्थों का पारायण करते हुए ही और गुरु की आज्ञापालन करते हुए ही इस ऐहिक लोक का त्याग किया हो !

सोमनाथ यात्रा

राजा कुमारपाल ने जब सोमनाथ की यात्रा की तो गुरु को भी साथ में चलने का आमन्त्रण दिया । हेमचन्द्र ने सहर्ष स्वीकार किया और कहा हम तपस्वियों का तो तीर्थाटन मुख्य धर्म है । यात्रा करते हुए सुखासन आदि वाहनों के लिए हेमचन्द्र के अस्वीकार किया और पैदल यात्रा की । राजा ने अत्यन्त भक्ति के साथ सोमनाथ के लिङ्ग की पूजा की और गुरु से कहा कि 'आपको किसी प्रकार की आपत्ति न हो तो आप त्रिभुवनपति सोमेश्वरदेव का अर्चन करें ।' आचार्य हेमचन्द्रने आह्वान, अवगुण्ठन मुद्रा, मन्त्र, न्यास, विसर्जन आदि स्वरूप, पञ्चोपचार विधि से शिव का पूजन किया तथा 'भव बीजाङ्कुरजनना रागाद्याः क्षयमुपागता यस्य । ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥' आदि स्वप्रणीत श्लोकों से स्तुति की । कहा जाता है कि उन्होंने इस अवसर पर राजा को साक्षात् महादेव के दर्शन कराए । इस पर कुमारपाल ने कहा कि हेमचन्द्राचार्य सब देवताओं के अवतार और त्रिकालज्ञ हैं । इनका

उपदेश मोक्ष मार्ग को देने वाला है। (संस्कृत द्व्याश्रय काव्य, सर्ग–५, श्लोक १३३–१४१)

इसी प्रकार राजा कुमारपाल की कुलदेवी कण्टेश्वरी देवीके समक्ष जो पशुबली–सप्तमी को ७०० पशु और ७ भैंसे, अष्टमी को ८०० पशु और ८ भैंसे तथा नवमी को ९०० पशु और ९ भैंसे दी जाती थी उसको भी अपनी शक्ति का प्रयोग कर समाप्त करवाया। शैवमठाधीश गण्ड बृहस्पति भी जैनाचार्यों को वन्दन करते थे। ऐसा होने पर भी वे अन्ध श्रद्धा (गतानुगतिक) के पक्षपाती नहीं थे। हेमचन्द्र ने महावीरस्तुति में स्पष्ट कहा है हे वीर प्रभु, केवल श्रद्धा से ही आपके प्रति पक्षपात नहीं है और न ही किसी द्वेष के कारण दूसरे से अरुचि है। आगमों के ज्ञान और यथार्थ परीक्षा के बाद तेरी शरण ली है। 'न श्रद्धयैव त्वयि पक्षपातो न द्वेषमात्रादरुचि परेषाम्। यथावदाप्तत्वपरीक्षया च त्वामेव वीर प्रभुमाश्रिताः स्मः ॥ महावीर स्तुति, श्लोक–५।'

८४ वर्ष की अवस्था में अनशनपूर्वक अन्त्याराधन क्रिया उन्होंने आरम्भ की तथा कुमारपाल से कहा कि 'तुम्हारी आयु भी छः माह शेष रही है।' अन्त में कुमारपाल को धर्मोपदेश देते हुए संवत् १२२९ में अपना देह त्याग दिया।

शिष्य समुदाय

आचार्य हेमचन्द्र का गुजरात के दो–दो राजाओं–सिद्धराज जयसिंह और कुमारपाल, उदयन मन्त्री आम्रभट्ट, वाग्भट्ट, चाहड़, खोलक, महामात्य शान्तनु आदि राजवर्गीय परिवार से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। आचार्य का शिष्य समुदाय भी विशाल रहा है। कहा जाता है कि उनके १०० शिष्य थे। शतप्रबन्धकार रामचन्द्रसूरि, अनेकार्थ कोष के टीकाकार महेन्द्रसूरि, वर्द्धमानगणि, देवचन्द्रगणि, गुणचन्द्रगणि, यशःचन्द्रगणि, वैय्याकरणी उदयचन्द्रगणि, बालचन्द्रसूरि आदि मुख्य थे।

आचार्य हेमचन्द्र रचित त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित का मङ्गलाचरण 'सकलार्हत्प्रतिष्ठान' को परवर्ती तपागच्छ परम्परा पाक्षिक प्रतिक्रमण इत्यादि

में इसको चैत्यवन्दन के रूप में बोलकर हेमचन्द्राचार्य के प्रति अपनी भावाञ्जलि प्रस्तुत करता है । यह उचित भी है ।

साहित्य सर्जना

युगानुसार तर्क, लक्षण और साहित्य इन तीन महाविद्याओं का अधिकृत अध्ययन कर राज्यसभा का सदस्य बन जाना उत्तम कोटि का माना जा सकता है । किसी एक-दो विधा पर अपनी प्रतिभा के बल पर नूतन साहित्य का निर्माण कर महाकवि या महालेखक बनना सम्भवित माना जा सकता है किन्तु, अनेक विधाओं पर अधिकारपूर्ण मौलिक साहित्य का निर्माण करना सर्वोत्कृष्ट या सिद्धसारस्वत ही कर सकता है । इस तीसरी कोटि में आचार्य हेमचन्द्र को रखना ही न्यायसङ्गत होगा । इन्होंने जो कुछ भी साहित्य सर्जन किया वह मौलिक ही रहा, कोई टीका या टिप्पणी नहीं । हाँ, यह सत्य है कि पूर्व कवियों, लेखकों का विधिवत् अध्ययन कर उनके मन्तव्यों को आपने स्थान-स्थान पर उद्धृत अवश्य किया है या उनको आत्मसात् कर मौलिक सृजन ही किया है । यह भी एक विधा पर नहीं - शब्दानुशासन (पंचांगी सहित), कोष, अनेकार्थी कोष, देशी नाममाला, महाकाव्य, द्विसन्धान काव्य, अलङ्कार शास्त्र, छन्दःशास्त्र, न्याय शास्त्र, योग शास्त्र और स्तोत्र आदि विविध विषयों पर रचनाएँ की हैं जो कि यह सिद्धसारस्वत ही कर सकता है । दूसरी बात यह कि साहित्य सर्जन के अतिरिक्त दो-दो महाराजाओं पर अपने वैदुष्य का प्रभाव डालना और एक को तो अपना वशम्वद ही बना लेना, उन जैसे प्रभावक आचार्यों का ही कार्य है । उनके द्वारा जो निर्मित साहित्य जो प्राप्त हो रहा है उसकी सूची आगमप्रभाकर मुनिश्री पुण्यविजयजी ने तैयार की थी वह निम्न है :-

	ग्रन्थ नाम	श्लोक संख्या
१.	सिद्धहेमशब्दानुशासन	
२.	सिद्धहेम लघुवृत्ति	९०००
३.	सिद्धहेम बृहद्वृत्ति	१८०००
४.	सिद्धहेम बृहन्न्यास	८४०००
५.	सिद्धहेम प्राकृतवृत्ति	२२००

६.	लिङ्गानुशासन	३९८४
७.	उणादिगणविवरण	३२५०
८.	धातुपरायणविवरण	५६००
९.	अभिधानचिन्तामणिनाममाला	१००००
१०.	अनेकार्थ कोष	१८२८
११.	निघण्टु कोष	३९६
१२.	देशीनाममाला	३५००
१३.	काव्यानुशासन सविवरण	६८००
१४.	छन्दोनुशासन सविवरण	३०००
१५.	संस्कृत द्व्याश्रय	१५००
१७.	प्रमाणमीमांसा (अपूर्ण)	२५००
१८.	वेदाङ्कुश	१०००
१९.	त्रिषष्टिशलापुरुषचरित महाकाव्य	३६०००
२०.	परिशिष्ट पर्व	३५००
२१.	योगशास्त्र	१२७५०
२२.	वीतरागस्तोत्र	१८८
२३.	अन्ययोगव्यवच्छेद द्वात्रिंशिका	३२
२४.	अयोगव्यवच्छेद द्वात्रिंशिका	३२
२५.	महादेव स्तोत्र	४४

कहा जाता है कि इन्होंने ३.५ करोड़ श्लोको का निर्माण किया था किन्तु आज उसका शतांश ही २,०७,००० श्लोक प्रमाण ही साहित्य प्राप्त होता है । विदेशी आक्रान्ताओं द्वारा कुछ साहित्य जला दिया होगा, कुछ नष्ट हो गया होगा और कुछ भण्डारों में उपेक्षित पड़ा हुआ होगा ।

प्राप्त साहित्य पर किञ्चित् विवेचन प्रस्तुत है :-

सिद्धहेमशब्दानुशासन, ७ अध्याय - आचार्य हेमचन्द्र ने अपने समय में उपलब्ध समस्त व्याकरण वाङ्मय का अनुशीलन कर अपने 'शब्दानुशासन' एवं अन्य व्याकरणग्रन्थों की रचना की । हेमचन्द्र के पूर्ववर्ती व्याकरणों में तीन दोष-विस्तार, कठिनता एवं क्रमभङ्ग या अनुवृत्तिबाहुल्य पाये जाते हैं,

किन्तु शब्दानुशासनकार हेमचन्द्र उक्त तीनों दोषों से मुक्त हैं । उनका व्याकरण सुस्पष्ट एवं आशुबोधक रूप में संस्कृत भाषा के सर्वाधिक शब्दों का अनुशासन उपस्थित करता है । यद्यपि उन्होंने पूर्ववर्ती व्याकरणों से कुछ न कुछ ग्रहण किया है, किन्तु उस स्वीकृति में भी मौलिकता और नवीनता है। उन्होंने सूत्र और उदाहरणों को ग्रहण कर लेने पर भी उनके निबन्धनक्रम के वैशिष्ट्य में एक नया ही चमत्कार उत्पन्न किया है । सूत्रों की समता, सूत्रों के भावों को पचाकर नये ढंग के सूत्र एवं अमोघवृत्ति के वाक्यों को ज्यों के त्यों रूप में अथवा कुछ परिवर्तन के साथ निबद्ध कर भी अपनी मौलिकता का अक्षुण्ण बनाये रचाना हेमचन्द्र जैसे प्रतिभाशाली व्यक्ति का ही कार्य है ।

प्रारम्भ के ७ अध्यायों में कुल ३५६६ सूत्र हैं । लघुवृत्ति, बृहद्वृत्ति, बृहन्न्यास आदि व्याख्या ग्रन्थ लिखकर अपूर्व वैदुष्य का परिचय दिया है। लिङ्गानुशासन स्वोपज्ञ विवरण, उणादिगण स्वोपज्ञ विवरण, धातुपारायण स्वोपज्ञ विवरण इत्यादि का निर्माण कर शब्दानुशासन के पाँच अंगों को परिपुष्ट किया है ।

प्राकृत व्याकरण (सिद्धहेमशब्दानुशासन का आठवाँ अध्याय) - आचार्य हेम का यह प्राकृत व्याकरण समस्त उपलब्ध प्राकृत व्याकरणों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और व्यवस्थित है । इसके चार पाद हैं । प्रथम पाद में २७१, द्वितीय पाद में २१८, तृतीय पाद में १८२ और चतुर्ध पाद में ३८८ कुल सूत्र १०५९ हैं । चतुर्थ पाद में शौरसेनी, मागधी, पैशाची, चूलिका पैशाची की विशेषताओं का निर्णय है । हेमचन्द्र के सन्मुख पाँच-छः सदियों का भाषात्मक विकास और साहित्य उपस्थित था, जिसका उन्होंने पूर्ण उपयोग किया है । चूलिका पैशाची और अपभ्रंश का उल्लेख वररुचि ने नहीं किया है । चूलिका और अपभ्रंश का अनुशासन हेम का अपना ही है । अपभ्रंश भाषा का नियमन ११९ सूत्रों में स्वतन्त्र रूप से किया है । उदाहरणों में अपभ्रंश के पूरे के पूरे दोहे उद्धृत कर नष्ट होते हुए विशाल साहित्य का उन्होंने संरक्षण किया है ।

हेमचन्द्र ही सबसे पहले ऐसे वैय्याकरण हैं जिन्होंने अपभ्रंश भाषा

के सम्बन्ध में इतना विस्तृत विवेचन उपस्थित किया है ।

कोष-अभिधानचिन्तामणि नाममाला-१२वीं शताब्दी में जितने कोष ग्रन्थ लिखे गए उनमें से हेमचन्द्र के कोष सर्वोत्कृष्ट हैं । श्री ए.बी.कीथ अपने संस्कृत साहित्य के इतिहास में उक्त कथन का समर्थन करते हैं । इसमें छः काण्ड हैं जिनकी पद्य संख्या कुल १५४२ हैं । इस पर 'तत्त्वबोधविधायिनी' नामक स्वोपज्ञ टीका है । इस टीका ग्रन्थ में शब्द प्रामाण्य **वासुकि** एवं **व्याडि** से लिया गया है और व्युत्पत्ति **धनपाल** और **प्रपञ्च** से ली गई है। विकास, विस्तार, **वाचस्पति** आदि ग्रन्थों से लिया गया है । कोषों में यह कोष अनेक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है । इतिहास की दृष्टि से इस कोष का बड़ा महत्त्व है। टीका में पूर्ववर्ती ५६ ग्रन्थकारों और ३१ ग्रन्थों का उल्लेख किया है । सांस्कृतिक दृष्टि से हेमचन्द्र के कोषों की सामग्री महत्त्वपूर्ण है । हेमचन्द्र का स्थान न केवल संस्कृत कोष-ग्रन्थकारों में अपितु सम्पूर्ण कोष-साहित्यकारों में अक्षुण्ण है । भाषाविज्ञान की दृष्टि से भी यह कोष अत्यन्त उत्कृष्ट है।

शेषसङ्ग्रह नाममाला - जो कि अभिधान चिन्तामणि में शब्द नहीं आए थे उसकी पूर्ति स्वरूप ही है ।

अनेकार्थ सङ्ग्रह - जिन शब्दों के एक से अनेक अर्थ होते हैं उन शब्दों का इसमें संकलन किया गया है । इसमें ७ काण्ड हैं और १९३९ श्लोक हैं । अनेकार्थ शब्दों के इस सङ्ग्रह में प्रारम्भ एकाक्षर शब्दों से और अन्त षडक्षर शब्दों से होता है । शब्दों का क्रम आदिम अकारादि वर्णों तथा अन्तिम ककारादि व्यञ्जनों के अनुसार चलता है । इस कोष पर श्री हेमचन्द्रसूरि के शिष्य महेन्द्रसूरि टीका की है ।

देशीनाममाला - जिस प्रकार शब्दानुशासन में प्राकृत एवं अपभ्रंश का व्याकरण लिखकर शब्दानुशासन को पूर्णता प्रदान की है उसी प्रकार कोष साहित्य में भी देशी नाममाला लिखकर कोष साहित्य को पूर्णता प्रदान की है । इसमें ३९७८ शब्दों का संकलन है । देशी शब्दों का सङ्ग्रह कठिन कार्य है, सङ्ग्रह करने पर भी उनका ग्रहण करना और भी कठिन कार्य है । इसीलिए हेमचन्द्र ने यह कार्य अपने हाथों में लिया । देशी नाममाला में प्रयुक्त शब्दों की व्युत्पत्ति संस्कृत शब्दों से नहीं हो सकती । इसीलिए

इन्हें निरर्थक मानकर शब्दों का सङ्ग्रह कहकर डॉ० **बुल्हर** ने हेमचन्द्र की आलोचना की है किन्तु, डॉ० बुल्हर आलोचना करते समय हेमचन्द्र के मन्तव्य को समझ नहीं पाये। प्रो. **मुरलीधर** बनर्जीने स्वसम्पादित देशीनाममाला की प्रस्तावना में इस प्रश्न पर युक्ति संग्रत विचार किया है और आलोचना का समुचित उत्तर भी किया है। प्रो. **पिशल** ने इन शब्दों का सङ्ग्रह व्यर्थ ही माना है किन्तु प्रो. **बनर्जी** ने इसका भी उत्तर दिया है। देशी शब्दों का यह शब्दकोश बहुत ही महत्त्वपूर्ण तथा उपयोगी है इसमें तत्सम, तत्भव और देशी शब्दों का प्रयोग किया गया है। इस कोष में ४०५८ शब्द संकलित हैं। जिसमें तत्सम शब्द १८०, गर्भित तद्भव शब्द १८५०, संशय युक्त तद्भव शब्द ५२८ और अव्युत्पादित प्राकृत शब्द १५०० हैं। इस कोष में आठ अध्याय हैं और कुल ७८३ गाथाएँ हैं।

निघण्टु शेष - यह वनस्पति शब्दों का कोष है। इसमें छः काण्ड हैं। ३७९ श्लोक हैं। वैद्यक शास्त्र की दृष्टि से यह अत्यन्त उपयोगी है।

काव्यानुशासन - इसमें तीन प्रमुख विभाग हैं। १. सूत्र (गद्य), २. व्याख्या, ३. वृत्ति। काव्यानुशासन में कुल सूत्र २०८ हैं। सूत्रों की वृत्ति करने वाली व्याख्या 'अलङ्कार चूड़ामणि' कहलाती है और इसी व्याख्या को सुस्पष्ट करने के लिए उदाहरणों के साथ 'विवेक' नाम वृत्ति लिखी गई है। काव्यानुशासन ८ अध्यायों में विभक्त है। अलङ्कारशास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले सारे विषयों का प्रतिपादन बहुत ही सुन्दर रूप से किया गया है। अलङ्कार चूड़ामणि में कुल ८०७ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं और 'विवेक ८२५ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं। सम्पूर्ण काव्यानुशासन में १६३२ उदाहरण प्रस्तुत हैं। अलङ्कार चूड़ामणि एवं विवेक में ५० कवियों तथा ५१ ग्रन्थों के नामों का उल्लेख किया गया है।

प्रथम अध्याय में काव्य परिभाषा, काव्यहेतु, काव्यप्रयोजन आदि का वर्णन है। द्वितीय अध्याय में रस, स्थायी भाव, व्यभिचारी भाव तथा सात्त्विक भावों का वर्णन किया गया है। तृतीय अध्याय में शब्द, वाक्य, रस तथा दोषों पर प्रकाश डाला गया है। चतुर्थ अध्याय काव्यगुण अर्थात् ओज, माधुर्य एवं प्रसाद पर प्रकाश डाला गया है। पञ्चम अध्याय में छः शब्दालङ्कारों

का वर्णन है । छठे अध्याय में २९ अर्थालङ्कारों का वर्णन है। सप्तम अध्याय में नायक-नायिका के भेद-प्रभेदों पर विचार किया गया है। अष्टम अध्याय में काव्य को प्रेक्ष्य तथा श्रव्य दो भागों में विभाजित किया गया है । इसमें बाणभट्ट की तरह हेमचन्द्र भी कथा और आख्यायिका का भेद स्वीकार कर रहे हैं । नवमें अध्याय में चम्पू काव्य की परिभाषा है ।

काव्यानुशासन प्रायः सङ्ग्रहग्रन्थ है । इसमें आचार्य ने राजशेखर, मम्मट, आनन्दवर्द्धन और अभिनवगुप्त आदि से पर्याप्त आदि से पर्याप्त सामग्री ग्रहण की है । काव्यप्रकाश का विशेष उपयोग किया गया है, फिर भी काव्यानुशासन में हेमचन्द्र की मौलिकता अक्षुण्ण है । यद्यपि काव्यप्रकाश के साथ काव्यानुशासन का अधिक साम्य है । किन्तु, कहीं-कहीं नहीं अपितु पर्याप्त स्थानों पर हेमचन्द्र ने मम्मट का विरोध भी किया है । जैसे उपमा की परिभाषा । काव्यानुशासन में अपने समर्थन के लिए हेमचन्द्र विविध ग्रन्थ एवं ग्रन्थकर्त्ताओं के नाम उद्धृत करने में अत्यन्त चतुर हैं । कतिपय विद्वानों के मतानुसार काव्यानुशासन में मौलिकता का अभाव खटकता है । **महामहोपाध्याय पी.वी.काणे** के मतानुसार आचार्य हेमचन्द्र प्रधानतः वैय्याकरणी थे तथा अलङ्कारशास्त्री गौणरूप में थे । उनके मतानुसार काव्यानुशासन सङ्ग्रहात्मक हो गया है । **त्रिलोकीनाथ झा** (बिहार रिसर्च सोसायटी, वोल्यूम-४०-३ भाग एक-दो पृ० २२-२३) का मत भी इसी प्रकार है । श्री **ए.बी.कीथ** भी काव्यानुशासन में मौलिकता नहीं देखते । श्री **एस.एन.दास.** गुप्त एवं श्री **एस.के.डे.** इस विषय में कीथ के ही मत को स्वीकार करते हैं । किन्तु, श्री विष्णुपद भट्टाचार्य (आचार्य हेमचन्द्र पर व्यक्तिविवेक के कर्ता का ऋण' निबन्ध इण्डियन कल्चर ग्रन्थ १३ पृष्ठ २१८-२२४) ने श्री काणे के मत का खण्डन किया है और हेमचन्द्र के काव्यानुशासन में मौलिकता प्रस्थापित की है । वे रस-सिद्धान्त के कट्टर अनुयायी थे । काव्यानुशासन के मतानुसार काव्य संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और ग्राम्य अपभ्रंश में भी लिखा जा सकता है । काव्यानुशासन की व्याख्याओं 'अलङ्कार चूड़ामणि' तथा 'विवेक' में जो उदाहरण एवं जानकारी दी है वह संस्कृत साहित्य में एवं काव्यशास्त्र के इतिहास के लिए अत्यन्त उपयुक्त है ।

मम्मट का काव्यप्रकाश क्लिष्ट है, साधारण पाठकों के लिए सुगम नहीं और संस्कृत के काव्य के अतिरिक्त अन्य साहित्य विधाओं का अध्ययन करने के लिए दूसरे ग्रन्थ भी देखने पड़ते हैं । हेमचन्द्र का काव्यानुशासन इस अर्थ में परिपूर्ण है ।

छन्दोनुशासन - इसका अपरनाम छन्द चूड़ामणि है और स्वोपज्ञ टीका है । यह आठ अध्यायों एवं ७६३ सूत्रों में विभक्त है । अपने समय तक आवेशकृत एवं पूर्वाचार्यों द्वारा प्ररूपित समस्त संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश छन्दों का समावेश करने का प्रयत्न किया है । छन्दों के लक्षण तो इसमें संस्कृत में लिखे हैं किन्तु उनके उदाहरण, उनके प्रयोगानुसार संस्कृत, प्राकृत या अपभ्रंश से दिए गए हैं । ऐसे अनेक प्राकृत छन्दों के नाम लक्षण उदाहरण भी दिए हैं जो **स्वयम्भू छन्द** में नहीं है ।

छन्दोनुशासन की रचना काव्यानुशासन के बाद हुई है । छन्दोनुशासन से भारत के विभिन्न राज्यों में प्रचलित छन्दों पर प्रकाश पड़ सकता है । ग्रन्थ में प्रस्तुत उदाहरणों के अध्ययन से हेमचन्द्र का गीति काव्य में सिद्धहस्त होना भी मालूम पड़ता है ।

संस्कृत साहित्य की दृष्टि से छन्दोनुशासन के रूप में हेमचन्द्र की देन अधिक दृष्टिगत नहीं होती किन्तु प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा की दृष्टि से उनकी देन उल्लेखनीय है ।

प्रमाण-मीमांसा - प्रमाण-मीमांसा में यद्यपि उनकी मूल स्थापनाऐं विशिष्ट नहीं है तथापि जैन प्रमाण शास्त्र को सुदृढ़ करने में, अकाट्य तर्कों पर प्रतिष्ठित करने में प्रमाणमीमांसा विशिष्ट स्थान रखता है । यह ग्रन्थ सूत्र शैली का ग्रन्थ है । उपलब्ध ग्रन्थ में २ अध्याय और ३ आह्निक मात्र हैं। अपूर्ण है । हो सकता है कि वृद्धावस्था के कारण इसे पूर्ण न कर पाए हों, अथवा शेष भाग नष्ट हो गया हो । इस ग्रन्थ में हेमचन्द्र की भाषा **वाचस्पति** मिश्र की तरह नपीतुली, शब्दाडम्बरों से रहित, सहज और सरल है । यह न अति संक्षिप्त है और न अधिक विस्तार वाला । प्रमाण-मीमांसा का उद्देश्य केवल प्रमाणों की चर्चा करना नहीं है अपितु प्रमाणनय और सोपाय बन्ध मोक्ष इत्यादि परमपुरुषार्थोपयोगी विषयों की चर्चा करना है । इस ग्रन्थ की

विशेषता यह है कि हेमचन्द्र ने 'गृहीतग्राही' और 'ग्रहीष्यमाणग्राही' दो का समत्व दिखाकर सभी धारावाही ज्ञानों में प्रामाण्य का समर्थन कराया है । हेमचन्द्र इन्द्रियाधिपत्य और अनिन्द्रियाधिपत्य दोनों को स्वीकार करके उभयाधिपत्य का ही समर्थन करते हैं । हेमचन्द्र ने जय-पराजय व्यवस्था का नया निर्माण किया है । यह नया निर्माण सत्य और अहिंसा तत्त्वों पर प्रतिष्ठित हुआ है। इसके अनुसार जैन दर्शन जीवात्मा और परमात्मा के बीच भेद नहीं मानता। प्रत्येक अधिकारी व्यक्ति सर्वज्ञ बनने की शक्ति रखता है । अनेकान्तवाद और स्याद्वाद का इसमें पूर्ण समर्थन किया गया है ।

प्रमाणमीमांसा में हेमचन्द्र ने पूर्ववर्ती आगमिक, तार्किक, सभी जैन मन्तव्यों को विचार व मनन से पचाकर अपने ढंग की विशद, अपुनरुक्त, सूत्रशैली तथा सर्वसङ्ग्राहिणी विशदतम स्वोपज्ञ वृत्ति में सन्निविष्ट किया है। प्रमाणमीमांसा ऐतिहासिक दृष्टि से जैन तत्त्व साहित्य में तथा भारतीय दर्शन साहित्य में विशिष्ट महत्त्व रखता है ।

द्व्याश्रय संस्कृत - द्व्याश्रय काव्यों में प्रस्तुत संस्कृत द्व्याश्रय काव्य का स्थान अपूर्व है । इसमें सिद्धहेमशब्दानुशासन अध्याय ७ तक के नियमों, उदाहरणों को दिखाना आवश्यक समझकर सूत्रों के उदाहरण प्रश्तुत किए हैं। दूसरी तरफ चालुक्य वंश का ऐतिहासिक वर्णन भी दिया गया है । जो चालुक्य वंश के इतिहास के लिए स्पष्टता मूल्यवान है । इस काव्य में २० सर्ग और २८८८ श्लोक हैं । द्विसन्धान काव्यों की दृष्टि से यह काव्य अभूतपूर्व है ।

द्व्याश्रय प्राकृत - सिद्धहेमशब्दानुशासन के ८वें अध्याय प्राकृत व्याकरण के नियमों को स्पष्ट करने के लिए प्राकृत द्व्याश्रय काव्य की रचना की गई है । यह ८ सर्गों में विभाजित है । जिसमें ६ सर्ग में शौरसेनी, मागधी, पैशाची, चूलिका पैशाची और अपभ्रंश भाषा के उदाहरण स्पष्ट हैं । दूसरी तरफ महाराजा कुमारपाल जीवनचरित्र वर्णित है । इस प्रकार व्याकरण और जीवनचरित्र का प्रत्येक पद्यों में प्रयोग करते हुए कवि ने इसमें अपार सफलता प्राप्त की है ।

त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित महाकाव्य - यह ३६००० श्लोक परिमाण

का महाकाव्य है। इसे पौराणिक व ऐतिहासिक महाकाव्य भी कह सकते हैं। जैन परम्परा में जो ६३ शलाका महापुरुष माने गए हैं - चौवीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलदेव, नौ वासुदेव, नौ प्रतिवासुदेव। दस पर्वों में इसका विभाजन किया गया है। प्रत्येक पर्व में अनेकों सर्ग हैं। प्रथम पर्व में भगवान ऋषभदेव का, सप्तम पर्व जैन रामायण, आठ-नौ-दस पर्व ऐतिहासिक महापुरुष नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर के है। इसमें त्रैलोक्य का वर्णन पाया जाता है। इसमें परलोक, ईश्वर, आत्मा, कर्म, धर्म, सृष्टि आदि विषयों का विशद विवेचन किया गया है। इसमें दार्शनिक मान्यताओं का भी विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है। इतिहास, कथा एवं पौराणिक तथ्यों का यथेष्ट समावेश किया गया है। सृष्टि, विनाश, पुनर्निर्माण, देवताओं की वंशावली, मनुष्यों के युगों, राजाओं की वंशावलि का वर्णन आदि पुराणों के सभी लक्षण पूर्णरूपेण इस महद् ग्रन्थ में पाये जाते हैं।

यह सारा काव्य प्रौढ़ एवं उदात्त शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। प्रत्येक वर्णन सजीव एवं सालङ्कार है।

डॉ. हरमन जेकोबी ने त्रिषष्ठिशलाकापुरुषचरित को रामायण, महाभारत की शैली में रचे गये एक जैन महाकाव्य के रूप में स्वीकार किया है। यह ग्रन्थ पुराण और काव्य-कला दोनों ही दृष्टियों से उत्तम है। इस विशाल ग्रन्थ का कथा-शिल्प महाभारत की तरह है। आचार्य हेमचन्द्र ने अपने इस ग्रन्थ को महाकाव्य कहा है। उसकी संवाद-शैली, उसके लोक-तत्त्वों और उसकी अवान्तर कथाओं का समावेश इस ग्रन्थ को पौराणिक शैली के महाकाव्यों की कोटि में ले जाता है।

परिशिष्ट पर्व - इसे 'स्थविरावलिचरित' भी कहा गया है। इसमें १३ सर्ग हैं। मुक्तिगामी जम्बूस्वामी, प्रभव, शय्यम्भव, यशोभद्र, भद्रबाहु, सम्भूतिविजय, स्थूलिभद्र आर्यमहागिरि, आर्य सुहस्ति, वज्रस्वामी, आर्यरक्षित, आदि श्रुतकेवली चतुर्दश पूर्वधर, दस पूर्वधर, आचार्यों का प्राप्त पूर्ण परिचय दिया गया है।

आचार्य हेमचन्द्र की दो द्वात्रिंशिकाएँ प्राप्त होती है। पहली है अन्ययोग व्यवच्छेद द्वात्रिंशिका। इसमें ३२ श्लोक हैं। भक्ति की दृष्टि से

इन स्तोत्रों का जितना महत्त्व है उनसे कहीं अधिक काव्य की दृष्टि से महत्त्व है । अन्य योग व्यवच्छेद द्वात्रिंशिका में अन्य दर्शनों का खण्डन किया गया है । **डॉ. आनन्दशंकर ध्रुव** ने इन पर अपना अभिमत प्रकट किया है । उनके मत से 'चिन्तन और भक्ति का इतना सुन्दर समन्वय इस काव्य में हुआ है। यह दर्शन तथा काव्यकला दोनों ही दृष्टि से उत्कृष्ट कहा जा सकता है ।' जैन दर्शन के व्यापकत्व के विषय में बतलातेहुए हेमचन्द्र कहते हैं कि जिस प्रकार दूसरे दर्शनों के सिद्धान्त एक दूसरे को पक्ष व प्रतिपक्ष बनाने के कारण मत्सर से भरे हुए हैं उस प्रकार अर्हत् सिद्धान्त नहीं है क्योंकि यह सारे नयों को बिना भेदभाव के ग्रहण कर लेता है ।

इस स्तोत्र पर श्री मल्लिषेणसूरि की टीका 'स्याद्वादमञ्जरी' है ।

वीतराग स्तोत्र – यह भक्ति स्तोत्र है । इसमें २० स्तव हैं । ८-८ पद्यों का एक स्तव है इस प्रकार कुल पद्य संख्या १८६ है । भक्तहृदय हेमचन्द्र ने वीतराग स्तोत्र भक्ति के साथ समन्वयात्मकता एवं व्यापक दृष्टिकोण प्रदर्शित किया है ।

अयोग व्यवच्छेद द्वात्रिंशिका – इसमें भी ३२ पद्य हैं । इसमें प्रमुखता से स्वमत का मण्डन अर्थात् जैन मत का प्रतिष्ठापन किया गया है। भगवान महावीर की स्तुति करते हुए सरल एवं सरस शब्दों में जैन धर्म का स्वरूप संक्षेप तथा प्रामाणिक भाषा में वर्णित किया गया है ।

महादेव स्तोत्र – इस स्तोत्र में महादेव को आधार बनाकर वीतराग देव की स्तुति की गई है और यह सर्वधर्मसमन्वय की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कृति है ।

योगशास्त्र – चालुक्य नरेश कुमारपाल के विशेष अनुरोध से आचार्य हेमचन्द्र ने योगशास्त्र की रचना की थी । इसमें १२ प्रकाश और १०१८ श्लोक हैं । इस पर स्वोपज्ञ विवरण प्राप्त है । जिस प्रकार दिगम्बर परम्परा में योग विषयक शुभचन्द्र कृत ज्ञानार्णव ग्रन्थ अप्रतिम है उसी प्रकार श्वेताम्बर परम्परा में हेमचन्द्र का योगशास्त्र भी एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है । यह सरल, सुबोध, संस्कृत में रचा गया है । प्रायः इसमें अनुष्टुप् छन्द का ही प्रयोग किया गया है ।

इसमें ११ प्रकाश योगशास्त्र की परम्परा के अनुसार ही लिखे गए हैं, किन्तु बारहवें प्रकाश में 'श्रुतसमुद्र और गुरु के मुख से जो कुछ मैंने जाना है, उसका वर्णन कर चुका हूँ । अब वह निर्मल अनुभवसिद्ध तत्त्व को प्रकाशित करता हूँ' । इस योगशास्त्र की तुलना पतञ्जलि योगशास्त्र से की जा सकती है । विषय तथा वर्णनक्रम में मौलिकता तथा भिन्नता होते हुए भी महर्षि पतञ्जलि के योगसूत्र तथा हेमचन्द्र के योगशास्त्र में बहुत सी बातों में समानता पायी जाती है । अनीश्वरवादी होते हुए भी यत्र-तत्र परमेश्वर विषयक कल्पना भी दिखाई देती है । वस्तुतः यह उनकी उदारता है । वे परमात्मा व्यक्ति के नहीं गुणों के पूजक हैं । पातञ्जल का योगमार्ग एक प्रकार से एकान्तिक हो गया है, उसके द्वार सबके लिए खुले नहीं है । उसमें सबको आत्मानुभूति देने का आश्वासन भी नहीं है । जबकि योगशास्त्र में सभी मनुष्य उनको बताये हुए मार्ग पर चलकर मुक्तावस्था का आनन्द अनुभव कर सकते हैं । विश्वशान्ति के लिए तथा दृष्टिराग के उच्छेदन के लिए आचार्य हेमचन्द्र का योगशास्त्र आज भी अत्यन्त उपादेय ग्रन्थ है ।

विन्टरनित्ज अपने भारतीय साहित्य के इतिहास में लिखते हैं - योगशास्त्र केवल ध्यानयोग नहीं है अपितु सामान्य धर्माचरण की शिक्षा है। वरदाचारी (हिष्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर) भी इसी प्रकार का मत प्रकट करते है ।

टीका ग्रन्थ - आचार्य हेमचन्द्र प्रणीत शब्दानुशासन, कोष आदि पर अनेक उद्‌भट लेखकों ने समय-समय पर लेखनी चलाई है, उनमें से कुछ के उल्लेखनीय नाम अकारानुक्रम से इस प्रकार हैं :-

सिद्धहेमशब्दानुशासन (संस्कृत व्याकरण) - अमरचन्द्र (बृहद्‌वृत्ति अवचूरि), कनकप्रभ (लघुन्यास दुर्गपद व्याख्या), काकल कायस्थ (लघुवृत्ति ढुंढिका दीपिका), जिनसागरसूरि (दीपिका), धनचन्द्र (लघुवृत्ति अवचूरि), धर्मघोष (न्यास), नन्दसुन्दरगणि (लघुवृत्ति अवचूरि), मुनिशेखरसूरि (लघुवृत्ति ढुंढिका), रामचन्द्र (न्यास), विद्याकर (बृहद्‌वृत्ति दीपिका), विनयसागरगणि (अष्टाध्याय तृतीय पाद वृत्ति)

इस व्याकरण के आधार पर अनेक प्रक्रिया ग्रन्थ भी लिखे गए हैं,

जो निम्न हैं :- चन्द्रप्रभा व्याकरण (मेघविजयोपाध्याय), हेमप्रकाश व्याकरण (हेमलघु प्रक्रिया, स्वोपज्ञ विनयविजयोपाध्याय), हेमप्रक्रिया (वीरसिंह / महेन्द्र), हेमबृहद् प्रक्रिया (मयाशंकर शास्त्री), हेमशब्द संचय (अमरचन्द्र), हेमशब्दचन्द्रिका (मेघविजय) ।

प्राकृत व्याकरण - अमरचन्द्रसूरि, हरिभद्रसूरि

लिङ्गानुशासन (दुर्गपदप्रबोधवृत्ति) श्रीवल्लभोपाध्याय,

शेषसङ्ग्रह नाममाला (श्रीवल्लभोपाध्याय),

निघण्टु नाममाला (श्रीवल्लभोपाध्याय),

अभिधान चिन्तामणि नाममाला टीका - कुशलसागरगणि, देवसागरगणि (व्युत्पत्ति रत्नाकर), भानुचन्द्रगणि, श्रीवल्लभोपाध्याय (सारोद्धार), साधुरत्न (अवचूरि)

द्व्याश्रय काव्य टीका (संस्कृत) - अभयतिलकोपाध्याय

द्व्याश्रय काव्य टीका (प्राकृत) - पूर्णकलशगणि

वीतराग स्तोत्र टीका - प्रभानन्दसूरि (दुर्गपद प्रकाशिका), सोमोदयगणि, नयसागरगणि (अवचूरि), राजसागरगणि, माणिक्यगणि, मेघगणि

योगशास्त्र टीका - अमरप्रभसूरि (वृत्ति), इन्द्रसौभाग्यगणि (वार्त्तिक), मेरुसुन्दरगणि (बालावबोध), सोमसुन्दरसूरि (बालावबोध) ।

उपसंहार

साढ़े तीन करोड़ पंक्तियों के विराट् साहित्य का एक व्यक्ति के द्वारा सृजन करना स्वयं असाधारण बात है । आचार्य हेमचन्द्र अपने भव्य व्यक्तित्व के रूप में एक जीवन विश्व विद्यालय अथवा मूर्तिमान ज्ञानकोष से उन्होंने ज्ञानकोष के समकक्ष विशाल ग्रन्थ सङ्ग्रह का भी भावी पीढ़ी के लिए सृजन किया था । तेजस्वी और आकर्षक व्यक्तित्व को धारण करने वाले वे महापुरुष थे । वे तपोनिष्ठ थे, शास्त्रवेत्ता थे तथा कवि थे । वे महर्षि, महात्मा, पूर्णसंयमी, उत्कृष्ट जितेन्द्रिय एवं अखण्ड ब्रह्मचारी थे । वे निर्भय, राजनीतिज्ञ, गुरुभक्त, मातृभक्त, भक्तवत्सल तथावादी मानमर्दक थे । वे सर्व धर्म समभावी, सत्य के उपासक जैन धर्म के प्रचारक तथा देश के उद्धारक थे । कहा जाता

है कि उन्होंने अपने प्रभाव एवं उपदेश से ३३००० कुटुम्ब अर्थात् डेढ़ लाख व्यक्ति जैन धर्म में दीक्षित किए थे । सिद्धराज जयसिंह एवं कुमारपाल की राज्यसभा में रहते हुए भी उन्होंने राज्यकवि का सम्मान ग्रहण नहीं किया था। वे राज्यसभा में भी रहे तो केवल आचार्य के रूप में । गुजरात में अहिंसा की प्रबलता का श्रेय आचार्य हेमचन्द्र को ही है । वे केवल पुरातन पद्धति के अनुयायी नहीं थे । जैन साहित्य के इतिहास में 'हेमचन्द्रयुग' के नाम से पृथक् समय अंकित किया गया है तथा उस युग का विशेष महत्त्व है । वे गुजराती साहित्य और संस्कृत के आद्यप्रयोजक थे । इसलिए गुजरात के साहित्यिक विद्वान् उन्हें गुजरात का ज्योतिर्धर कहते हैं । इनके महाकाव्यों की तुलना संस्कृत साहित्य के एक भट्टी काव्य से ही की जा सकती है । किन्तु, भट्टी में भी वह पूर्णता व क्रमबद्धता नहीं जो हमें हेमचन्द्र में मिलती है । मधुसूदन मोदी ने भी हेमसमीक्षा नामक पुस्तक में उनके अपभ्रंश दोहों अत्यधिक प्रशंसा की है ।

हेमचन्द्र ने अपने समग्र साहित्य में स्थल-स्थल पर समन्वय भावना का व्यवहार किया है । इनके ग्रन्थ निश्चय ही संस्कृत साहित्य के अलङ्कार है । वे लक्षण, साहित्य, तर्क, व्याकरण एवं दर्शन के परमाचार्य हैं । आचार्य हेमचन्द्र के विशालकाय विपुल ग्रन्थसंग्रह को देखकर 'हेमोच्छिष्टं तु साहित्यम्' ऐसा कहा गया है ।

इस निबन्ध के लेखन में जिन साहित्यकारों, जिन लेखकों, जिन ग्रन्थों विशेषतः डॉ० वि. भा. मुसलगांवकर लिखित 'आचार्य हेमचन्द्र' का उपयोग विशेष रूप से किया गया है, अतएव इन सबका मैं आभारी हूँ ।

प्राकृत भारती अकादमी,
जयपुर